ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

बौद्ध धर्म और शिक्षण व्यवस्था

[1]डॉ0 अम्बिका बाजपेई

[1]एसोसिएट प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग, नवयुग कन्या महाविद्यालय, लखनऊ उ0प्र0

Received: 07 Jan 2019, Accepted: 13 Jan 2019 ; Published on line: 15 Jan 2019

Abstract

मानव के बौद्धिक व आध्यात्मिक उत्थान के लिए शिक्षा परमावश्यक है। इसी कारण प्राचीन काल से ही शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखते हुए वैदिक शिक्षा के अन्तर्गत गुरूकुलों की व्यवस्था की गयी। जब बौद्ध धर्म का आविर्भाव हुआ तो बौद्ध धर्म के अन्तर्गत बौद्ध विहारों व संघारामों का जन्म हुआ। इन्हीं विहारों में से कुछ विहार विकसित होकर विश्वविद्यालय के रूप में हमारे समक्ष आये जैसे– नालंदा, वलभी विश्वविद्यालय आदि। प्रस्तुत पत्र में बुद्ध के पूर्व व बुद्ध के पश्चात् लगभग 12वीं–13वीं शताब्दी तक भारत में शिक्षा की व्यवस्था व स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। गुरूकुल शिक्षा पद्धति से विहारों की शिक्षा पद्धति में आये परिवर्तनों की समीक्षा की गयी है। बौद्ध विहारों और विश्वविद्यालयों की प्रशासनिक व्यवस्था, शिक्षण व्यवस्था, नियम व प्राचीन काल के प्रमुख विश्वविद्यालयों व शिक्षा केन्द्रों का वर्णन प्रस्तुत पत्र में किया गया है।

Key Words:- संघाराम, चीवर, प्रवज्या, उपसम्पदा, वैयाकरण, विनयधर, सुत्तंतिक एवं अनुदान।

Introduction

मनुष्य और समाज का बौद्धिक और आध्यात्मिक उत्थान शिक्षा के माध्यम से ही संभव माना जाता रहा। शिक्षा से ज्ञान का उदय होता है। ज्ञान और विद्या से मुक्ति प्राप्त होती है तथा मनुष्य शिल्प में निपुणता प्राप्त करता है।[1] ऋग्वैदिक समाज के भौतिक की अपेक्षा बौद्धिक ज्ञान का महत्व था। ऋग्वेद के गायत्री जैसे मंत्र ज्ञान के उच्चतम आधार थे। भारतीय विचारकों द्वारा तीन लोको की कल्पना की गयी है– मनुष्य लोक, पितृलोक और देवलोक। इनमें से मनुष्य लोक को पुत्र द्वारा, पितृ लोक को यज्ञापि कर्म द्वारा व देव लोक को विद्या द्वारा ही जीता जा सकता है। तीनों लोकों में देवलोक ही श्रेष्ठ है इसलिये विद्या प्रशंसनीय है।[2] प्राक्बौद्ध काल में आर्यजनों को ज्ञान प्रदान करने के लिये शिक्षण संस्थानों के रूप में गुरूकुलों की स्थापना हुई थी जिनके माध्यम से समाज में शिक्षा का व्यापक प्रचार हुआ और देश में ज्ञान की प्रगति हुई।

बौद्ध शिक्षण पद्धति का आरम्भ स्वंय महात्मा बुद्ध ने किया था, जिसमें सरल सुबोध भाषा में जीवन के तत्वों पर विचार व्यक्त किये गये। विचारों का आख्यान, व्याख्यान व प्रश्नोत्तर के आधार पर किया गया था। बौद्ध शिक्षा पद्धति में सत्य, दार्शनिक तथ्य, तर्क, पर्यवेक्षण, मनन पर बल दिया गया। बुद्ध के पश्चात् बौद्ध शिक्षा का प्रसार बौद्ध मठों व विहारों के माध्यम से प्रारम्भ हुआ। बौद्ध धर्म के प्रथम ग्रंथ पिटक साहित्य में आचार्यों के गुरुकुलों के उल्लेख मिलते हैं। उस काल में ख्याति प्राप्त ब्राह्मण आचार्यों को 'दिशा प्रमुख' आचार्य कहा जाता था। इनकी समाज में बहुत प्रतिष्ठा थी। अंग की राजधानी चंपा में अध्यापन कार्य करने वाले एक आचार्य का उल्लेख मिलता है, जिनके आश्रम में

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

500 छात्र शिक्षा प्राप्त करते थे।[3] सुनेत्त और सेल नामक प्रसिद्ध दिशा प्रमुख आचार्य कोशल में शिक्षण कार्य करते थे।[4] इसी प्रकार मिथिला[5] और वाराणसी[6] के भी दिशा प्रमुख आचार्यों का उल्लेख बौद्ध साहित्य में हुआ है। इस काल का सर्वाधिक प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्र तक्षशिला था। यहाँ के दिशा प्रमुख आचार्य तो विश्वविख्यात थे। आचार्य चाणक्य का सम्बन्ध यहीं से था।

महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं का अनुसरण कर बहुत सारे लोगों ने भिक्षुवत धारण कर लिया था और वे भिक्षुसंघ में सम्मिलित हो गये थे। इन भिक्षु संघों का संगठन आश्रम व्यवस्था के आदर्शों पर किया गया था। ये बौद्ध संघ या विहार शिक्षा के प्रमुख केन्द्र बन गये थे। भिक्षु जीवन में ब्रह्मचर्याश्रम, वानप्रस्थाश्रम व सन्यासाश्रम का समन्वय होने के कारण विहारों में शिक्षण कार्य को प्रमुखता मिली। ब्राह्मणों के गुरुकुलों के साथ–साथ अब बौद्ध विहारों में भी अध्ययन की सुविधा उपलब्ध होने से शिक्षा का व्यापक प्रचार हुआ। बुद्धकाल में राजगृह, वैशाली, श्रावस्ती तथा कपिलवस्तु में स्थापित हुये विहार शिक्षा के प्रमुख केन्द्र बन गये। राजगृह में वेणुवन, यष्टिवन तथा सीतावन, वैशाली में कूटागारशाला तथा आम्रवन, कपिलवस्तु में निग्रोधाराम और श्रावस्ती में जेतवन तथा पूर्वाराम प्रसिद्ध विहार थे।[7] इनके अतिरिक्त अनेक विहारों का निर्माण हुआ। इन्हें संघाराम कहा जाता था, जिनमें आध्यात्मिक चिंतन होता था। इन के आचार्य अपने शिष्यों को आध्यात्मिक ज्ञान देते थे। ये लोग प्रायः भ्रमणशील रहा करते थे। जिन विहार में कुछ समय व्यतीत करने के लिये रूकते थे, वहाँ के भिक्षुओं के साथ इनका विचार विमर्श होता व इनके द्वारा शंका समाधान किया जाता था।[8] इन बौद्ध विहारों में आध्यात्मिक ज्ञान के साथ लौकिक विषयों व शिल्पों की शिक्षा प्रदान करने की भी व्यवस्था की गयी थी। उदाहरण के लिये भिक्षुओं के आवास के लिये जब विहारों का निर्माण किया जाता था तो उसकी देखभाल के लिये एक भिक्षु की नियुक्ति की जाती थी। इसे 'नवकम्मिक' कहा जाता था। वह नये भवनों के निर्माण का निरीक्षण करने के साथ–साथ पुराने भवनों की मरम्मत के कार्यों की भी देखभाल करता था।[9] भिक्षुओं द्वारा बुनने का काम भी किया जाता था।[10] वे अपने पहनने वाले वस्त्र चीवरों की सिलाई भी करते थे।[11] कालांतर में जब बौद्ध विहारों में उपासकों को शिक्षा दी जाने लगी तब लौकिक विषयों को भी पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। विनय व धर्म की शिक्षा उपासकों को दी जाती थी जिसमें महात्मा बुद्ध के धर्म सिद्धान्तों की नियोजन होती थी। सुत्त, विनय व धम्म के विद्यार्थी एक साथ रहते थे। भिक्षु सुत्त का पाठ करते थे, विनय का विमर्श करते थे तथा धम्म का पर्यालोचन करते थे जिससे उनके ज्ञान में वृद्धि होती थी। भिक्षु को दीक्षा प्राप्त करने के लिये संघ में पब्बजा (प्रवज्या) और उपसम्पदा जैसे संस्कार आवश्यक माने गये। बुद्ध के पश्चात इस बात की आवश्यकता प्रतीत की गयी कि जन साधारण को बौद्ध धर्म के प्रति जागरूक करना चाहिये और जनता में बौद्ध धर्म के प्रति उत्साह की भावना जाग्रत किया जाना आवश्यक है जिसके फलस्वरूप बौद्ध धर्म सम्बंधी शिक्षण संस्थाओं का उदय हुआ।

बुद्ध के समय में तक्षशिला सर्वाधिक महत्वपूर्ण शिक्षा के केन्द्र था। इसका कारण यहाँ के दिशा प्रमुख आचार्य थे। दूरस्थ क्षेत्र के विद्यार्थी यहाँ आकर अध्ययन करते थे। इसकी जानकारी जातकों से मिलती है कि भारत वर्ष के क्षत्रिय और ब्राह्मण कुमार शिल्प सीखने के लिये तक्षशिला के आचार्यों के पास जाते थे।[12] वाराणसी[13] राजगृह[14] मिथिला[15] उज्जैनी[16] आदि सुदूर नगरों से विद्यार्थी तक्षशिला

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

जाते थे। तक्षशिला विश्वविद्यालय से स्नातक कुछ प्रसिद्ध लोग थे– कोशल नरेश प्रसेनजित, मगध के विख्यात वैद्य जीवक, वैयाकरण पाणिनी, आचार्य कौटिल्य तथा सम्राट चन्द्रगुप्त आदि। तक्षशिला में वस्तुतः आधुनिक महाविद्यालय या विश्वविद्यालय जैसी कोई शिक्षण संस्था नहीं थी। वहाँ तो विद्वानों का आवास ही संस्था था , जहाँ आचार्य अपने वरिष्ठ शिष्यों से सहयोग प्राप्त कर शिक्षण कार्य करते थे। तक्षशिला में अध्ययन करने के लिए वही रहना अनिवार्य नहीं था। अनेक राजकुमार अपने रहने की स्वयं व्यवस्था करते थे।[17] यहाँ अध्ययन के लिए विभिन्न वर्गों व जातियों के विद्यार्थी आते थे। तक्षशिला के आचार्यों ने राजकुमारों, ब्राह्मण कुमारों तथा श्रेष्ठि पुत्रों के साथ दर्जी और मछली मारने वालों को भी शिष्य बनाया था। धनी छात्र तो धन के रुप में गुरुदक्षिणा चुकाते थे परन्तु निर्धन छात्र श्रम के रूप में गुरुदक्षिणा चुकाते थे।[19] तक्षशिला में 6 प्रमुख विषयों की शिक्षा दी जाती थी–

(1) वेद
(2) वैदिक साहित्य– षड्वेदांग अथर्व शिक्षा, छंद, व्याकरण, निरुक्त, कल्प तथा ज्योतिष
(3) ब्राह्मण संहिता तथा उपनिषद
(4) गृहसूत्र तथा धर्मसूत्र
(5) अन्य विषय

यज्ञों से सम्बद्ध विषय के साहित्य का विकास हुआ, जिसका नाम पड़ा। प्रयोग धर्मविधियों का पद्यमय वर्णन करने वाला साहित्य कारिका कहलाया। वैदिक अनुक्रमणी का भी निर्माण हुआ।[20]

(6) लौकिक साहित्य– अर्थशास्त्र, शिल्प तथा वार्ता।

बौद्ध विहारों में बौद्ध दर्शन तथा पाली भाषा की शिक्षा को प्रमुखता दी गयी। ब्राह्मण तथा बौद्ध दोनों एक दूसरे के साहित्य भण्डार से पूर्ण परिचित रहते थे। बौद्ध बिहारो में जहाँ एक दूसरे के साहित्य भण्डार से पूर्ण परिचित रहते थे। बौद्ध विहारों में जहाँ एक ओर ब्राह्मण दर्शन का ज्ञान कराया जाता था वहीं दूसरी ओर गुरुकुल परम्परा की शिक्षा में बौद्ध दर्शन का। विनयपिटक के अनुसार लेख, गणना व रुप (मुद्राशस्त्र) का भी ज्ञान प्रदान किया जाता था।[21] मिलिन्दपन्हों से पता चलता है कि बुद्धकाल में विभिन्न शिल्पों का विकास हुआ था, जिनकी शिक्षा भी दी जाती थी। इस प्रकार ब्राह्मण पद्धति जो प्राचीन है, उसमें गुरुगृह विद्या के केन्द्र होते थे जबकि शिक्षण पद्धति की परम्परा विहारों की है। उसकी पूर्ति भिक्षु जीवन से सम्बद्ध है। प्रो0 मुखर्जी ने लिखा है कि ब्राह्मण पद्धति में गार्हस्थ्य के वातावरण की आवश्यता होने से गुरुक्षेत्र विस्तृत बनकर बड़े विश्वविद्यालय का रूप ले सके। बौद्ध पद्धति में शिक्षण कई शिक्षकों के सांघिक स्वामित्व की संस्था बन गया।[22] इसी कारण बौद्ध शिक्षण पद्धति में बड़े बड़े विहार–विश्वविद्यालय निर्मित हो सके जिनमें हजारों अध्यापक और विद्यार्थी एक साथ रहते थे। बौद्ध धर्म की अंतिम तीन चार शताब्दियों में ये विश्वविद्यालय सम्पूर्ण एशिया में प्रसिद्ध हो गये। कालांतर में नालंदा, विक्रमशिला, जगद्दल, ओदंतीपुरी में विभिन्न विश्वविद्यालयों का निर्माण हुआ जिनके विषय में जानकारी बौद्ध धर्म ग्रंथों, चीनी व तिब्बती स्रोतों से मिलती है।

बौद्ध शिक्षण का इतिहास बौद्ध मठ–विहारों और भिक्षु संघों के इतिहास का ही एक पक्ष है। जब किसी सन्यासी द्वारा बौद्ध मठों में प्रवेश किया जाता था तब उसे जो शिक्षण दिया जाता था उसे 'निस्सय पद्धति' कहते थे।[23] इसका तात्पर्य होता था शिक्षक पर निर्भर रहना। निस्सय काल शिक्षा

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

ग्रहण करने का काल था जिसे ब्राह्मण ग्रंथों में ब्रह्मचर्य कहा गया है। यह एक ऐसी पद्धति थी, जिसमें गुरुगृह पद्धति का पालन किया जाता था। मठ में प्रवेश करने वाला व्यक्ति पाँच वर्ष में अपना शिक्षण कार्य पूर्ण करता था या वह आजीवन निस्सय में रहता था। उपज्झाय (उपाध्याय) शिक्षार्थी का आध्यात्मिक निर्देशक होता था। व्यक्तिगत पाठ पढ़ाने वाला आचार्य कहलाता था जो कम से कम दस वर्ष तक भिक्षु रहा होता था।

सम्पूर्ण शिक्षा श्रवण व स्मरण पद्धति पर आधारित थी। विनय पिटक में एक स्थान पर उन वस्तुओं का उल्लेख हुआ है जिनको भिक्षु को अपने पास रखने का निर्देश दिया गया है। इन वस्तुओं में हस्तलिखित ग्रंथ या लेखन सामग्री का कोई उल्लेख नहीं है।[24] अतः सिद्ध होता है कि पुस्तक लेखन बहुत बाद में व्यवहार में आया। पुरातात्विक साक्ष्य से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। मथुरा के प्राच्यवस्तु संग्रहालय में एक बहुत घिसी हुई मूर्ति मिलती है जिसमें खुले आकाश के नीचे जमीन पर कुछ विद्यार्थी बैठे दिखाये गये है, जिनके समक्ष उन के गुरु आसीन है जिनके बांये हाथ में सिर पर तिरछा उठाया हुआ छाता है।[25] मठों में भिक्षु को आर्चायों द्वारा विनय और गाथाएँ, जातक कथाएँ, प्रार्थनाएँ व दर्शन का ज्ञान प्रदान किया जाता था। भिक्षुओं के शिक्षण का प्रमुख अंग धम्म और विनय थे जिनके लिखे हुये धर्म ग्रंथ नहीं थे। दोनों विषयों के विशेषज्ञों को सुत्तंतिक और विनयधर कहा जाता था। कुछ विशेष खंडों के विशेषज्ञ 'मातिका धर' कहलाते थे जो मातिकाएँ (मंत्रादि) जानते थे। शिक्षा निष्ठा और ईमानदारी से ग्रहण की जाती थी। वर्षावास के अंत में सम्पन्न होने वाली एक गंभीर विधि पवारणा थी।

बौद्ध प्रशिक्षण में कथाओं का बहुत महत्व था। इन्ही में से विकसित पद्धति को अभिधम्म कहा गया। अभिधम्म पिटक में शिक्षक और विद्यार्थी के विषय में कहा गया है कि शिक्षक ऐसा होना चाहिये जो विद्यार्थी को धर्म और विनय की सब बातें समझाये, धर्म के अनुसार शास्त्रार्थ करे और कराये, गलत सिद्धांत कौन से है यह बताए। दूसरी ओर विद्यार्थी के लिये भी कहा गया है कि वह वाद–विवाद पटु हो और शिक्षक यदि कोई गलत सिद्धांत ग्रहण करें या औरों को ग्रहण कराये तो उसका विरोध करें।[26] इन विभिन्न बिहारों में भिक्षुओं को शास्त्रार्थ, वाद–विवाद व खंडन की स्वतंत्रता प्राप्त थी। प्रत्येक व्यक्ति चाहे व धम्म का हो या विनय का उसे अपने आप सोचने विचार करने, तर्क करने और किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने के लिये प्रेरित किया जाता था। संघ के सामने औपचारिक रूप से अपने मतभेद रखने की पद्धति के नियम बने हुये थे। संघ में मतदान की बहुसंख्या से अंतिम निर्णय किया जाता था। भिक्षुओं के बौद्धिक दृष्टि से तेज बनने पर बौद्ध मठों में बहुत बल दिया जाता था। इसी कारण धीरे धीरे मठ प्रसिद्ध विद्याकेन्द्र बन गये। इन मठों व विहारों के भिक्षुओं द्वारा कुछ विशिष्ट ग्रंथों की रचनाएँ भी की गयीं। बौद्ध धर्म अपने अनुयायियों की संख्या में वृद्धि करने हेतु अन्य धर्मों के अनुयायियों का धर्म परिवर्तन करना चाहता था। बौद्ध विहारों का अस्तित्व राज्याश्रय पर आधारित था। इसके लिये मठ व विहारों में रहने वाले भिक्षुओं को उस आश्रय के योग्य बनना जरुरी था। विहारो में शास्त्रार्थ, पंडित सभाएँ व विविध पंथों के बीच वाद–विवाद होते रहते थे। इसी कारण बौद्ध शिक्षण पद्धति में भी तर्क और न्याय की बारीकी में पारंगतता का समावेश होने लगा। जैसे–जैसे विहारो के स्वरूपों में परिवर्तन हुआ और उनमें बौद्ध धर्मग्रंथों के अतिरिक्त अन्य विषय भी पढ़ाये जाते थे जैसे

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

अन्य धर्मों के सिद्धांत व दर्शन पद्धतियाँ। कुछ विहारों में व्यावहारिक महत्व के विषयों की भी शिक्षा दी जाती थी। जैसे–कृषि व वास्तु विद्या आदि। प्रथम शताब्दी ई0पूर्व के बाद विहारो में भी ग्रंथों की रचना होने लगी। बौद्ध विहारों को राजाओं व साधारण जनता द्वारा अनुदान प्राप्त होता था, जिनसे इनका व्यय चलता था। सम्राटों द्वारा ग्राम या ग्राम संघ का सारा राजस्व विहारों को दिया जाता था। धीरे–धीरे इन विहारों में काफी सम्पदा एकत्र हो गयी।

बौद्ध शिक्षण संस्था की सम्पूर्ण व्यवस्था बौद्ध भिक्षुओं के हाथ में रहती थी। विश्वविद्यालयों का प्रबन्ध किसी विशिष्ट विद्वान के निर्देशन में होता था, जो संघ के सदस्यों के मतों से भिक्षुओं में से चुना जाता था। ऐसा प्रबन्धक अपने ज्ञान और विद्वता में अग्रणी होता था।[27] नालंदा भी एक बौद्ध संघ था। नवीं शताब्दी में एक भिक्षु उसके प्रधानाचार्य बने थे। प्रबन्ध कार्य में प्रधानाचार्य को सहायता करने के लिये कई समितियाँ होती थीं, जिनमें दो समितियाँ प्रधान थीं–एक शिक्षा समिति और दूसरी प्रबन्ध समिति। प्रबंध समिति के अन्तर्गत शिक्षण संस्थाओं की प्रशासनिक व्यवस्था, कार्यकर्ताओं की नियुक्ति तथा भवनों का निर्माण आदि कार्य व शिक्षा समिति के प्रबंध के अन्तर्गत विभिन्न पाठ्यक्रमों का निर्धारण और व्यवस्था का नियोजन होता था।[28]

बौद्ध शिक्षण संस्थाओं के नियम व अनुशासन हिंदू शिक्षण व्यवस्था के अनुसार ही थे। नालंदा और विक्रमशिला विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त राजगृह, वैशाली, श्रावस्ती, कपिलवस्तु आदि नगरों में कई प्रसिद्ध विहारों और मठों का उत्कर्ष हुआ, जो कालांतर में बौद्ध शिक्षा के प्रधान केन्द्र के रूप में विकसित हुए।

बुद्धोत्तर काल में नालंदा सर्वाधिक प्रसिद्ध बौद्ध शिक्षा केन्द्र था। बिहार में स्थित इस स्थान की ख्याति बुद्ध के समय से ही थी। 500 श्रेष्ठियों ने मिलकर 10 करोड़ मुद्राओं से नालंदा क्षेत्र को क्रय करके महात्मा बुद्ध को अर्पित किया था। बुद्ध के प्रिय शिष्य सारिपुत्र की यह जन्मभूमि थी। बुद्ध ने यहाँ के आम्रवन में रहकर शिष्यों को धर्म की दीक्षा दी थी। मौर्य सम्राट अशोक द्वारा यहाँ एक विशाल विहार का निर्माण कराया गया। गुप्त सम्राटों द्वारा भी इसके विकास में सहयोग दिया गया था। ह्वेनसांग के विवरण के अनुसार अनेकानेक बौद्ध विहारों का यहाँ निर्माण किया गया।[29] नालंदा बौद्ध धर्म और दर्शन की शिक्षा का प्रधान केन्द्र था। यहाँ बौद्ध धर्म के महायान पंथ का अध्ययन कराया जाता था। पाली भाषा की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जाती थी। ह्वेनसांग की जीवनी लिखने वाले ह्वी ली ने बताया कि नालंदा में महायान की शिक्षा के अतिरिक्त अट्ठारह पंथो के ग्रंथ पढ़े जाते थे जिनमें वेद, वेदांग, हेतुविद्या, शब्द विद्या, चिकित्सा विद्या, अथर्ववेद या मंत्र विद्या, सांख्य आदि विद्याएँ थीं।[30] इत्सिंग 'बौद्ध धर्म' के वृत्तान्त के 34 वें अध्याय में प्रचलित शिक्षण पद्धति के बारे में जानकारी देते हुए बताता है कि विद्यार्थी के अध्ययन का मुख्य अनिवार्य विषय संस्कृत व्याकरण था।[31] यशोमित्र की टीका से स्पष्ट है कि व्याकरण, उणादि सूत्र, काशिका वृत्ति, चूर्णि, भर्तृहरि का शास्त्र, वाक्यपदीय और पेई न अथवा बेड़ा वृत्ति, हेतु विद्या, अभिधर्म कोष आदि। नालंदा अपनी ''वाद–विवाद की शालाओं'' के लिये प्रसिद्ध था। नागार्जुन, वसुबंधु, असंग, धर्मकीर्ति आदि कुछ महायानी विचारक थे जिन्होने यहाँ से शिक्षा प्राप्त की थी। धर्मपाल, चन्द्रपाल, गुणमति, स्थिरमति, प्रभामित्र, जिनमित्र आदि प्रमुख आचार्य नालंदा में ज्ञान प्रदान करते थे। नालंदा विश्वविद्यालय का पुस्तकालय धर्मगंज

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

बहुत विशाल था, जो तीन भवनों में स्थित था जिनके नाम रत्नसागर, रत्नोदधि व रत्नरंजक थे। इस पुस्तकालय में पुस्तकों का विशाल भण्डार विद्यमान था।

वलभी विश्वविद्यालय हीनयान की शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था जो गुजरात के काठियावाड क्षेत्र में स्थित था। यहाँ सर्वप्रथम विहार का निर्माण राजकुमारी टड्डा ने कराया था। इत्सिंग ने इसके विषय में विवरण दिया है।[31] यहाँ तर्क, व्याकरण, साहित्य, आदि विषयों की शिक्षा दी जाती थी। ह्वेनसांग ने वलभी में 100 विहारों के होने का उल्लेख किया है। वलभी के धनी निवासियों व नरेशों द्वारा इसे आर्थिक सहयोग प्रदान किया जाता था।

बंगाल के पालवंशीय शासक धर्मपाल ने आठवीं शताब्दी ईस्वी में बिहार के भागलपुर के निकट एक विहार की स्थापना की जो विक्रमशिला विश्वविद्यालय कहलाया। यहाँ बौद्ध धर्म और दर्शन के अतिरिक्त न्याय, तत्वज्ञान, व्याकरण आदि की भी शिक्षा दी जाती थी। यहाँ सबसे अधिक संख्या में तिब्बत से विद्यार्थी आते थे। यहाँ के प्रसिद्ध विद्वान है रक्षित, विरोचन, ज्ञानपद, बुद्ध, जेतारि, रत्नाकर शांति, ज्ञानश्री मित्र, रत्नवज्र, दीपंकर, अभ्यंकर। दीपंकर नामक भिक्षु ने अनेक ग्रंथों की रचना की थी। नालंदा व विक्रमशिला विश्वविद्यालय पूर्व मध्ययुग में हुये मुस्लिम आक्रमणों में नष्ट कर दिये गये। श्रावस्ती बुद्ध के जीवनकाल से ही बौद्ध धर्म और शिक्षा का केन्द्र था। प्रमुख श्रेष्ठि अनाथपिंडक ने बुद्ध के समय में जेतवन विहार का निर्माण करावाया था। अशोक व सम्राट हर्ष के समय श्रावस्ती विहार बौद्ध ज्ञान और दर्शन का प्रमुख केन्द्र था। यहाँ बौद्ध ज्ञान व आचार की शिक्षा प्रदान की जाती थी। बंगाल के क्षेत्र में परवर्ती पाल नरेश रामपाल ने जगद्दल नामक स्थान पर विहार निर्मित कराया जो विश्वविद्यालय के रूप में विख्यात हुआ। यह भी बौद्ध शिक्षा का महत्वपूर्ण केन्द्र था। ओदंतीपुरी भी बौद्ध शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था। इसकी स्थापना पालों से पूर्व विहार के रूप में हुई थी परन्तु इसे पाल राजाओं के शासनकाल में विश्वविद्यालय का रूप प्राप्त हुआ। इन राजाओं द्वारा उसे उदारतापूर्वक दान दिया गया। बौद्ध विद्वानों का विचार है कि तिब्बत में जो पहला विद्यालय बना वह इसी विश्वविद्यालय के आदर्श पर बना था।

इनके अतिरिक्त प्राचीन भारत में अनेक बौद्ध शिक्षा केन्द्र थे। कश्यप बुद्ध संघाराम बौद्ध ज्ञान के लिये प्रसिद्ध थे जो पाँच मंजिलों में निर्मित हुआ था। प्रत्येक मंजिल किसी न किसी पशु–पक्षी के आकार की थी। जैसे– हाथी, सिंह, घोड़ा, बैल, कबूतर आदि।[32] ह्वेनसांग ने कई बौद्ध मठों में रहकर ज्ञान प्राप्त किया था और प्राचीन ग्रंथों की पांडुलिपियाँ तैयार की थीं। वह कश्मीर स्थित विहार के कोश, न्याय व हेतु का जानकार बना। जालन्धर के बौद्ध विहार में ह्वेनसांग ने सर्वास्तिवाद का अध्ययन किया था। श्रुघन के मठ में वह रहा। अभिधर्मज्ञान प्रस्थान शास्त्र का ज्ञान उसे मित्रसेन से मतिपुर के विशाल संघाराम में मिला। कान्यकुन्ज के भद्र नामक बौद्ध विहार में उसने वीर्यसेन से त्रिपिटक का ज्ञान प्राप्त किया।[33] ह्वेनसांग ने वाराणसी के तीस ऐसे विहारों का उल्लेख किया है जो सर्वास्तिवाद सिद्धान्त के प्रधान केन्द्र थे।[34] मुंगेर के हिरण्य के संघाराम में रहकर उसने संघभद्र द्वारा लिखित न्याय शास्त्र के ग्रंथों का अध्ययन किया था।[35] ललित विस्तार ग्रंथ से कपिलवस्तु के विद्या और शिल्प का केन्द्र होने का पता चलता है जहाँ गौतम बुद्ध ने विभिन्न शिल्प व विद्या का ज्ञान प्राप्त

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

किया था। वैशाली नगर के भी बौद्ध शिक्षा का प्रमुख केन्द्र होने की जानकारी जातको से मिलती है।[36]

इस प्रकार से देखा जा सकता है कि छठी शताब्दी ई0पूर्व से लेकर 12वीं0 शताब्दी ई0 तक भारत में बौद्ध धर्म और बौद्ध शिक्षण संस्थाओं का विकास हुआ। इन संस्थाओं ने बौद्ध धर्म व दर्शन के ज्ञान का विस्तार करने में अभूत–पूर्व योगदान दिया। भारत के विभिन्न प्रान्तों ही नहीं बल्कि दूसरे देशों के विद्यार्थी की बड़ी संख्या में आकर इन शिक्षण संस्थाओं में दीक्षित हुये। इसका प्रभाव यह हुआ कि बौद्ध धर्म का तो प्रसार भारत से बाहर भी हुआ और उसकी जड़े दूसरे देशों में भी दृढ़ता से जम गयी साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की ख्याति काफी फैल गयी। इन विश्वविद्यालयों के अनेक विद्वान तिब्बत पहुँचे, जहाँ उन्होंने अपने ग्रंथ लिखे। बौद्ध धर्म के तिब्बती विश्वकोश में उनका समावेश है। कुछ मूल तिब्बती में है, कुछ संस्कृत के अनुवाद है। तिब्बती लिपि भी दीपंकर श्री ज्ञान ने भारतीय लिपि से ही निर्मित की और इस कारण इन प्रवासी विद्वानों को तिब्बती सीखनें में कठिनाई नही हुई, उसी में उन्होंने गंथ रचना भी की।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

(1) विष्णु पुराण, 6,5,6,1
(2) बृहदारण्यक उपनिषद, 1,5,16
(3) जातक, 6, पृष्ठ–32
(4) अंगुत्तर निकाय, 3, पृष्ठ–371; सुत्त निपात, 317
(5) मज्झिम निकाय, 2, पृष्ठ–113–34
(6) दुराजान जातक (64); संजीव जातक (150)
(7) मुखर्जी, राधाकुमुद– Ancient Indian Education, पृ0 443
(8) मुखर्जी, राधा – Ancient Indian Education, पृ0 452
(9) चुल्लवग्ग, 6/5, 6/17
(10) चुल्लवग्ग, 5/28
(11) चुल्लवग्ग, 5/11
(12) जातक 3, पृष्ठ 158
(13) जातक 1, पृष्ठ 272, 285, 409; 2, पृष्ठ–85, 87;4,पृ0–50, 224;5, पृ–127, 263
(14) जातक 3, पृष्ठ 238; 5, पृ–177, 247
(15) जातक 4, पृष्ठ 316 ;6, पृ–347
(16) जातक 4, पृ–392
(17) जातक 4, पृ–96
(18) मुखर्जी, राधाकुमुद, Ancient Indian Education, पृ 482
(19) मिलिन्दपन्हो, 6/2
(20) सिंह, मदन मोहन, बुद्धकालीन समाज और धर्म, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1993, पृ–95
(21) विनयपिटक, 1/77;4/128;मुखर्जी, राधाकुमुद; Ancient Indian education , पृ 482

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 01, Jan 2019

(22) दत्त, एस, बौद्ध शिक्षण, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2010,1 पृ 112
(23) दत्त, एस, बौद्ध शिक्षण, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2010 पृ–113,
(24) दत्त, एस, बौद्ध शिक्षण, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2010 पृ–114
(25) दत्त, एस, बौद्ध शिक्षण, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2010 पृ–114
(26) दत्त, एस, बौद्ध शिक्षण, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2010 पृ–115
(27) Beal, S. Buddhist Recrods of the western world, translation from Chinese Hiuen Tsang. Pg. 74-79
(28) Watters, T. On Yuan Chwang's Travels in India, 2 Vol., London 1904-05, Pg. 165
(29) Watters, T. On Yuan Chwang's Travels in India, 2 Vol., London 1904-05, Pg. 164
(30) दत्त, एस, बौद्ध शिक्षण, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 2010 पृ–119
(31) मिश्र, जयशंकर, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृ–544
(32) मिश्र, जयशंकर, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृ–545
(33) Beal, S. Buddhist Records of the western world, translation from Chinese Hiuen Tsang. Pg. 84
(34) Beal, S. Buddhist Records of the western world, translation from Chinese Hiuen Tsang. Pg. 98
(35) मिश्र, जयशंकर, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृ–545
(36) Beal, S. Buddhist Records of the western world, translation from Chinese Hiuen Tsang. Pg. 36